कथा साहित्य

यह संकलन

प्रस्तुत संकलन में हिन्दी के लब्ध-प्रतिष्ठ कहानीकारों की छह चुनी हुई कहानियाँ संकलित हैं। विविध सामाजिक सन्दर्भों को आधार बनाकर विविध भाषा-शैलियों में गढ़ी हुई इन कहानियों में से हर एक की अपनी अलग गुणवत्ता है। इन कहानियों के माध्यम से छात्र-छात्राओं को हिन्दी कहानी के पुराने और नये रूपों का समग्र परिचय मिल सकेगा। दोनों प्रकार की कहानियों का संख्यात्मक अनुपात बराबर-बराबर है। निश्चय ही आदर्श और यथार्थ का यह सन्तुलन अध्येताओं को हिन्दी साहित्य और जीवन की एक स्वस्थ समझदारी दे सकेगा। इन कहानियों के द्वारा छात्र-छात्राओं को भारतीय ग्राम और नगर-समाज की सही झलक तो दिखायी देगी ही, उनमें अपनी संस्कृति और अपने राष्ट्र के प्रति एक ऐसा दायित्व-बोध उपज सकेगा जो उन्हें विचारशील नागरिक बनने की सजग प्रेरणा प्रदान करेगा।

'खून का रिश्ता' कहानी में भीष्म साहनी ने सिद्ध किया है कि आर्थिक दयनीय स्थिति में खून के रिश्ते भी बेमानी सिद्ध होते हैं। मंगलसेन चाचा के साथ भी ऐसा ही हुआ। फणीश्वरनाथ रेणु की कहानी 'पंचलाइट' में ग्रामीण अंचल का वास्तविक चित्र दिखाई देता है। कोमल संवेदना को कुचलती शिवानी की कहानी 'लाटी' परिस्थितियों की निष्ठुरता से घायल पति की पीड़ा का अहसास पाठकों को कराती है। अमरकान्त जी ने 'बहादुर' कहानी के माध्यम से समाज के वर्ग भेद को उजागर किया है। शिवप्रसाद सिंह की 'कर्मनाशा की हार' कहानी में समाज में व्याप्त रूढ़ियों तथा अन्धविश्वासों पर व्यंग्य किया गया है। जैनेन्द्र कुमार द्वारा लिखित कहानी 'ध्रुवयात्रा' भी अत्यन्त रुचिकर है।

हमें विश्वास है कि यह संकलन अध्येताओं को हिन्दी कहानी का सही परिचय दे सकेगा।

भूमिका

कहानी गद्य-साहित्य की सबसे लोकप्रिय विधा मानी जाती है। आरम्भ में मनोरंजन और आत्म-परितोष के लिए कहानी कही-सुनी जाती थी। बाद में व्यक्ति और समाज के महत्त्वपूर्ण अनुभवों को प्रकट करने के लिए तथा नीति और उपदेश, सामाजिक सुधार, बाह्य एवं आन्तरिक अनुभूतियों आदि की अभिव्यक्ति के लिए भी कहानी को माध्यम बनाया गया। कहानी अपनी वर्णनात्मक विशेषता के कारण अत्यन्त प्रभावशाली विधा रही है।

निबन्ध की तुलना में कहानी गद्य की बहुत सरल विधा है। कदाचित इसीलिए उसका चलन भी निबन्ध के पहले से है। कहानी कहना और सुनना सभी अवस्था के लोगों को प्रिय है। पर कहानी केवल मनोरञ्जन का ही साधन नहीं है, वह गहन विचारों और सन्देशों को भी वहन करती है। विश्व-साहित्य में ऐसी भी कहानियाँ लिखी गयी हैं जो देश और काल की सीमा का अतिक्रमण करती हुई मानव-मन पर अपना स्थायी प्रभाव छोड़ गयी हैं।

परिभाषा

कहानी के लक्षण और परिभाषा के सम्बन्ध में विचारकों के अलग-अलग मत हैं। **प्रेमचन्द** के अनुसार, ''कहानी ऐसा उद्यान नहीं जिसमें भाँति-भाँति के फूल और बेलबूटे सजे हुए हों, बल्कि वह एक गमला है जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप में दृष्टिगोचर होता है।''

पं० रामचन्द्र शुक्ल ने कहानी की परिभाषा इस प्रकार दी है—''सादे ढंग से केवल कुछ अत्यन्त व्यञ्जक घटनाएँ और थोड़ी बातचीत सामने लाकर क्षिप्र गति से किसी एक गम्भीर संवेदना या मनोभाव में पर्यवसित होनेवाली गद्य विधा कहानी है।''

एडगर एलन पो का अभिमत है कि ''कहानी एक निश्चित प्रकार का वर्णनात्मक गद्य है जिसके पढ़ने में आधे से लेकर एक घण्टे का समय लगता है।''

इन तथा अन्य परिभाषाओं के आधार पर कहानी के लक्षण निम्नांकित रूप में निर्धारित किये जा सकते हैं—

1. कहानी में एक ही विषय अथवा संवेदन का प्रस्तुतीकरण होता है।
2. कहानी का एक निश्चित उद्देश्य होता है तथा उसमें संवेदनात्मक अन्विति होती है।
3. मानवीय संवेदनाओं, अनुभूतियों एवं तथ्यों की रोचक व्यञ्जना होती है।
4. वस्तु तत्त्व (चरित्र, घटनाएँ, कथानक) का आकार लघु होता है।
5. मनोरञ्जन के साथ-साथ जीवन की शाश्वत समस्याओं का प्रकाशन भी कहानी का लक्ष्य है।

कहानी के तत्त्व

कहानी में 6 तत्त्वों की प्रधानता होती है—

(1) कथानक
(2) पात्र एवं चरित्र-चित्रण
(3) कथोपकथन (संवाद)
(4) वातावरण (देश-काल)
(5) भाषा-शैली
(6) उद्देश्य

कथानक

कहानी में कथानक सबसे प्रधान तत्त्व है। कहानी में वस्तुविन्यास अथवा कथानक का निबन्धन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य है। घटना-प्रधान कहानियों में तो कथानक का ही विशेष महत्त्व है, परन्तु अन्य प्रकार की कहानियों में भी इसका महत्त्व कम नहीं है। कथानक के नियोजन पर ही कहानी की सफलता निर्भर करती है। वस्तुतः कथानक के बिना कहानी का कोई अस्तित्व ही नहीं है। यद्यपि अधुनातन कहानी में इस बात की भी चेष्टा की जाती रही है कि कथानक अनिवार्य न रहे, पर ऐसा कोई प्रयोग बहुत सफल नहीं हो सका है।

आज कहानियों में कथानक का निषेध तो नहीं हो सका, पर उसका ह्रास अवश्य लक्षित होता है और उसके स्थान पर मनःस्थितियों पर पड़नेवाले प्रभाव को महत्त्व दिया जाने लगा है। इस तरह कथानक का आधार क्षीण होता जा रहा है, यद्यपि कथानक के सूत्र किसी-न-किसी रूप में विद्यमान रहते ही हैं। जैनेन्द्रकुमार की 'एक रात', इलाचन्द्र जोशी की 'रोगी', उषा प्रियम्वदा की 'मछलियाँ', मन्नू भण्डारी की 'तीसरा आदमी' आदि कहानियाँ ऐसी ही हैं। कहानी का कथानक प्रभावोत्पादक, विचारोत्तेजक एवं जीवन के यथार्थ से सम्बद्ध होना चाहिए। कहानी का स्वरूप निश्चित करते समय कहानीकार को युग-बोध और भाव-बोध दोनों दृष्टियों से विचार करना चाहिए। कहानी में आरम्भ, उत्कर्ष और अन्त—तीन कथा-स्थितियाँ होती हैं और तीनों का ही अत्यधिक महत्त्व है। आरम्भ में परिचयात्मक स्वरूप धारण करते हुए कहानी परिस्थितिजन्य प्रभावों को एकत्र करती हुई अत्यन्त तीव्रता से उत्कर्ष बिन्दु पर पहुँचती है। इसीलिए कहा जाता है कि कहानी उस छोटी दौड़ की प्रतियोगिता की भाँति है, जिसमें आरम्भ से लेकर अन्त तक दौड़ की तीव्रता में कहीं कमी नहीं आती। इस दृष्टि से वस्तु-विन्यास के आरम्भ, मध्य और समापन—तीनों में गति की तीव्रता का नैरन्तर्य बराबर बना रहना चाहिए।

यदा-कदा ऐसी कहानियाँ भी मिलती हैं, जिनमें दुहरे कथानक होते हैं। नयी कहानियों में यह प्रवृत्ति विशेष रूप से मिलेगी। ऐसी कहानियों में प्रभावान्विति खण्डित नहीं होती, कहानी के मूल भाव के अनुसार ही कथावस्तु की संरचना की जाती है। कथावस्तु में क्रमबद्धता के साथ-साथ कुतूहल एवं चमत्कार का भी विशेष महत्त्व है। तिलस्मी, जासूसी आदि कहानियों में चमत्कारपूर्ण योजना ही प्रधान हुआ करती है। कथानक में द्वन्द्व और संघर्ष का स्थान भी महत्त्वपूर्ण है। कभी-कभी द्वन्द्व चित्रण ही कहानी का मुख्य ध्येय बन जाता है। यह द्वन्द्व भौतिक भी होता है और मानसिक भी। कभी व्यक्ति को अपने समानधर्मी व्यक्ति से, कभी परिस्थितियों से और कभी स्वयं अपने अन्तःकरण के मनोभावों से लड़ना पड़ता है। द्वन्द्व से कथानक में नाटकीयता उत्पन्न हो जाती है और कहानी रुचिकर हो जाती है।

कथानक में कल्पना संभाव्य और असंभाव्य दोनों रूपों में व्याप्त होती है। लेखक जिस विषय को कहानी का प्रतिपाद्य बनाता है, उसे प्रस्तुत करने के लिए वह ऐसे कारण, कार्य और परिणाम की योजना करता है जो कथ्य को प्रभावोत्पादक बनाकर यथार्थ धरातल पर प्रतिष्ठित कर सके। इसके लिए उसे पूरे कथानक को परिच्छेदों में विभाजित करना पड़ता है अथवा ऐसे मोड़ देने पड़ते हैं कि कथ्य प्रभावान्विति का कारण बन सके।

कथानक में आदि, मध्य और अन्त—तीन महत्त्वपूर्ण स्थल हैं। आदि से अन्त तक कहानी की एकोन्मुखता बनी रहती है। वस्तु के अनुरूप ही कहानी के कथानक की योजना करनी पड़ती है। आदि में वह पीठिका तैयार करनी पड़ती है जिस पर कहानी का अन्त प्रतिष्ठित होता है। कहानी का मध्य-बिन्दु वह स्थल है, जहाँ कहानी अपनी चरम सीमा पर पहुँचकर पाठक की उत्सुकता को विशेष तीव्र एवं संवेदनशील बनाती है। कहानी को वास्तविक आकार मध्य में ही मिलता है। कभी-कभी कहानी में मध्य बिन्दु का पता नहीं लगता और कथानक की चरम सीमा अन्त में व्यक्त होती है। इस दृष्टि से समापन का स्थल अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यहीं पहुँचकर कहानी अपनी सम्पूर्ण संवेदनशीलता, प्रभावोत्पादकता एवं पूर्णता का परिचय देती है। प्रभाव की पूर्णता समापन का लक्ष्य है। सारी जिज्ञासा की वृद्धि और कुतूहल की समाप्ति यहीं आकर होती है। मूलभाव की प्रतीति इसी स्थल पर होती है। कहानी का अन्त लघु, सांकेतिक और स्पष्ट होना आवश्यक है। लेखक को यह ध्यान में रखना पड़ता है कि अन्त ऐसे स्थल पर हो, जहाँ कहानी का सम्पूर्ण अन्तरंग ऐसे बिन्दु पर पहुँचकर अनावृत हो जाय कि आगे कुछ कहने की आवश्यकता न रहे। कुछ कहानियाँ ऐसी भी लिखी गयी हैं जिनमें कथावस्तु, घटनाओं और कार्य-कारण आदि की स्थिति एकदम नगण्य है।

पात्र एवं चरित्र-चित्रण

कहानी के मूल भाव के अनुसार ही पात्रों के व्यक्तित्व, चरित्र एवं प्रवृत्तियों का निर्धारण होता है। मानव का चरित्र जब बहुमुखी और जटिल नहीं हुआ था तब बाह्य घटनाओं का चमत्कारपूर्ण वर्णन कहानी के आकर्षण का केन्द्र था। साहित्य की सभी विधाओं में घटनाओं और संघर्ष की ही प्रधानता थी। चरित्रों का विभाजन—धीरोदात्त, धीरललित, धीरोद्धत और धीरप्रशान्त रूप में करके

उनकी सीमाएँ निर्धारित कर दी गयी थीं और उनके गुण-दोष तालिकाबद्ध थे। परन्तु 19वीं शती के आरम्भ में वैज्ञानिक प्रगति एवं मनोवैज्ञानिक उपलब्धियों ने साहित्य की निर्धारित मान्यताओं में युगान्तर उपस्थित किया। सामाजिक आचार-विचार एवं मान्यताओं में भी परिवर्तन हुआ और चरित्रों में अनेक जटिलताओं एवं रूपों की सृष्टि हुई। अब मानव-चरित्र कई स्तरों में विभाजित हो गया है। एक ही व्यक्ति के चरित्र में द्विव्यक्तित्व और बहुव्यक्तित्व का रूप दिखायी पड़ता है। भौतिकवादी और व्यावसायिक दृष्टि की प्रधानता होने से प्राचीन आदर्शवादी एवं नैतिक दृष्टि बहुत पीछे छूट गयी है। प्रत्येक मनुष्य अथवा मनुष्य द्वारा सम्पादित कोई विशिष्ट कार्य अथवा मनुष्य से सम्बद्ध कोई घटना ही इस मूलभाव के अन्तर्गत रहती है। घटना अथवा वातावरण को भी सजीव रूप देने के लिए, उसे प्राणमय बनाने के लिए मनुष्य को प्रतिष्ठित करना पड़ता है। निष्कर्ष यह है कि कहानी का मूलभाव चाहे जो भी हो, मानव-चरित्र की प्रतिष्ठा ही कहानी का प्रधान विषय है। कहीं मनुष्य मूलभाव से सीधे सम्बद्ध होता है और कहीं प्रकारान्तर से। कहानी में पात्र और कथावस्तु का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध होता है। दोनों मिलकर कहानी के केन्द्रीय भाव को व्यक्त करते हैं। कुछ पात्र सामान्य होते हैं और कुछ प्रतीकात्मक। सामान्य पात्रों के भी दो वर्ग होते हैं—कुछ वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं और कुछ व्यक्ति का। कहानी लघु प्रसारवाली होती है। इसलिए उसमें नायक के चरित्र को ही अधिक उभारकर प्रस्तुत किया जाता है। दूसरे पात्रों के चरित्र की प्रमुखता होने पर कहानी का मूल भाव आच्छन्न हो जायगा। कहानी में उपन्यास की भाँति चरित्रांकन में वैविध्य की गुंजाइश नहीं होती। इसमें चरित्र या जीवन के किसी एक पक्ष की झलक मिलती है। किसी एक विशेष परिस्थिति में रखकर नायक की किसी एक प्रवृत्ति का उद्‌घाटन करना ही कहानीकार का अभीष्ट हुआ करता है। चरित्रांकन की सफलता के लिए यह भी आवश्यक है कि चरित्र गतिशील हो और यथार्थ जीवन से सम्बद्ध हो। चरित्र-चित्रण यदि पुरानी रूढ़ियों एवं सिद्धान्तों के अनुसार किसी एक घिसी-पिटी परिपाटी से किया जायगा तो वह पत्थर की मूर्ति की तरह निर्जीव हो जायगा।

आज के बौद्धिक युग का पाठक चारित्रिक वैचित्र्य को देखना व समझना चाहता है। अन्तर्जगत् के भावात्मक संघर्ष में उसे एक विशेष प्रकार का रस मिलने लगा है। पहले की कहानियों में कुतूहल एवं जिज्ञासा जगाने और उसे तृप्त करने की प्रवृत्ति ही प्रधान थी, परन्तु आजकल का पाठक बौद्धिक दृष्टि से बहुत आगे बढ़ गया है। वह कहानी में चरित्र की सूक्ष्मता और चारित्रिक भंगिमाओं का वैविध्य देखने की आकांक्षा रखता है। इसीलिए आज की कहानियों में वैविध्य-विधायिनी मनोवृत्तियों के उद्‌घाटन की प्रवृत्ति अधिक दिखलायी पड़ती है। वेशभूषा, बाह्य क्रियाकलाप, शारीरिक द्वन्द्व आदि स्थूल बातें अब हमें तृप्त नहीं करतीं। आज के पाठक की इच्छा होती है कि वह विचित्र चरित्र के मनोलोक में प्रवेश कर उसके अन्तर्जगत् की झाँकी प्राप्त कर सके। तात्पर्य यह कि आज की सबसे उत्तम कहानी का आधार मनोवैज्ञानिक सत्य है। वातावरण एवं परिस्थितियों का अब कोई स्वतन्त्र महत्त्व नहीं रह गया है। वे पात्रों के सूक्ष्म मनोभावों के प्रस्तुतीकरण में योगदान करते हैं। चरित्र का युद्धस्थल, उसका सारा संघर्ष अब बाह्य से अधिक आन्तरिक हो गया है। आन्तरिक द्वन्द्वों के अनुरूप ही बाहरी घटनाएँ और क्रिया-व्यापार मुख्य रूप से प्रस्तुत किये जा रहे हैं। मनोवैज्ञानिक चरित्रांकन के साथ-साथ आज ऐसे चरित्रांकन की माँग है जो ईमानदारी के साथ मानव के यथार्थ स्वरूप की अवतारणा कर सके। चरित्रचित्रण की तीन प्रणालियाँ कहानियों में दिखलायी पड़ती हैं—वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक और नाटकीय।

वर्णनात्मक प्रणाली के द्वारा लेखक स्वयं चरित्र की विशेषताओं का वर्णन करता है। विश्लेषणात्मक कहानियों में विभिन्न मानसिक स्थितियों का विश्लेषण प्रस्तुत करते हुए लेखक चरित्र की विशेषताओं का उद्‌घटन करता है तथा सांकेतिक प्रणाली अपनाकर चरित्र के महत्त्वपूर्ण अंशों की ओर संकेत कर देता है और मूल्यांकन पाठकों पर छोड़ देता है। नाटकीय पद्धति में वार्त्तालाप और क्रिया-व्यापार की प्रधानता होती है।

कथोपकथन

कथोपकथन के मुख्यतः दो कार्य होते हैं—पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को उद्‌घाटित करना और कथा-प्रवाह को आगे बढ़ाना। कहानी में कथोपकथन को पूर्ण नियन्त्रित, चमत्कारयुक्त एवं लघुप्रसारी होना चाहिए। कहानी के आरम्भ में जिज्ञासा और कुतूहल को जगाने के लिए बहुधा नाटकीय संवादों की योजना करनी पड़ती है। परिस्थिति एवं पात्रों को जोड़ने के लिए और आन्तरिक भावों एवं मनोवृत्तियों के उद्‌घाटन के लिए संवाद-तत्त्व (कथोपकथन) की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। कथोपकथन में मात्रा और औचित्य पर भी ध्यान रखना जरूरी है। आवश्यकता से अधिक वार्त्तालाप उबा देनेवाला होता है और औचित्य का विचार न करके की गयी संवाद-योजना कहानी की प्रभावान्विति में बाधा डालती है। अतः पात्र की शिक्षा-दीक्षा, देश-काल और सामयिक स्थिति के अनुरूप ही संवादों की योजना की जानी चाहिए।

चरित्रप्रधान कहानियों में व्यक्तित्व और उसकी प्रवृत्तियों का परिचय देने के लिए कथोपकथन विशेष महत्त्वपूर्ण होता है। वार्त्तालाप द्वारा ही चारित्रिक विशेषताएँ प्रकट होती हैं। पात्र का अन्तरंग वाणी के माध्यम से उद्‌घाटित होता है। इसके लिए भावानुरूप वाक्य-

योजना एवं शब्द-चयन अपेक्षित है। कही जानेवाली बात किस युग, काल अथवा देश की है, इसका भी कथोपकथन की योजना करते समय ध्यान रखना आवश्यक है। अभिवादन, सम्बोधन, प्रेम, क्रोध आदि को व्यक्त करने के लिए औचित्य एवं मर्यादा को ध्यान में रखकर भाषा का प्रयोग आवश्यक है। इसी प्रकार विभिन्न वर्गों जैसे मजदूर, किसान, अध्यापक, ग्रामीण और नगरीय चरित्रों की दृष्टि से भी भाषा का प्रयोग करना पड़ता है। व्यावहारिक एवं भावात्मक स्थलों के अनुसार विषयानुरूप संगति बैठानेवाली वाक्य-योजना से ही कहानी सुरुचिपूर्ण एवं मार्मिक बनती है। कथानक, विषय-प्रतिपादन एवं पात्र-योजना की दृष्टि से कथोपकथन की भाषा को व्यावहारिक स्वरूप देना पड़ता है। मुहावरों का सामाजिक एवं प्रसंगानुकूल प्रयोग भी कहानीकार के लिए आवश्यक है। शिष्ट हास्य और व्यंग्य से समन्वित होकर कथोपकथन सजीव हो जाता है।

कथोपकथन के प्रायः दो रूप मिलते हैं—विशुद्ध नाटकीय और विश्लेषणात्मक। विशुद्ध नाटकीय ढंग से लेखक अपनी ओर से कुछ भी नहीं जोड़ता। दो पात्र परस्पर वार्त्तालाप करते हैं। विश्लेषणात्मक ढंग में लेखक अपनी ओर से पात्रों के सम्बन्ध में उनकी मुद्राओं और भाव-भंगिमाओं का उद्घाटन करने के लिए कथोपकथन की योजना करता है। प्रथम प्रकार के कथोपकथन की प्रणाली प्रेमचन्द की कहानी 'सुजान भगत' और दूसरे प्रकार के कथोपकथन का उदाहरण भगवतीचरण वर्मा की 'प्रायश्चित्त' कहानी में मिलता है।

वातावरण

वातावरण के अन्तर्गत देश-काल और परिस्थिति आती है। लेखक घटना और पात्रों से सम्बन्धित परिस्थितियों का चित्रण सजीव रूप में करता है। सम्पूर्ण परिस्थितियों की योजना साभिप्राय और क्रमिक ढंग से की जाती है। प्रकृति, ऋतु, दृश्य आदि का अत्यन्त संक्षिप्त और सांकेतिक रूप में वर्णन करके किसी घटना अथवा परिणाम को सजीव एवं यथार्थ बना दिया जाता है। प्रेमचन्द की 'सुजान भगत' और प्रसाद की 'पुरस्कार' कहानी में इस प्रकार की योजनाएँ मानवीय प्रवृत्तियों एवं परिस्थितियों के अनुकूल की गयी हैं। वातावरण के दृश्य-विधान से न केवल चरित्र की मनःस्थिति पर प्रकाश पड़ता है, वरन् प्रेम, शोक आदि व्यापार सजीव बन जाते हैं। 'उसने कहा था' कहानी में वातावरण का यह चित्र लहनासिंह की मृत्यु की ओर संकेत देते हुए परिस्थिति को कितना बिम्बग्राही बना देता है—''लड़ाई के समय चाँद निकल आया था, ऐसा चाँद जिसके प्रकाश से संस्कृत कवियों का दिया हुआ क्षयी नाम सार्थक होता है। और हवा ऐसी चल रही थी, जैसी बाणभट्ट की भाषा में दन्तवीणोपदेशाचार्य कहलाती है।''

मनुष्य का रचनात्मक विकास और ह्रास बहुत कुछ वातावरण की ही देन है। संवेदना यदि कहानी की आत्मा है तो वातावरण उसका शरीर। 'आकाशदीप', 'पुरस्कार', 'बिसाती', 'दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी', 'रोज' और 'मक्रील' आदि कहानियाँ इस कथन की सार्थकता सिद्ध करती हैं। वातावरण की दृष्टि से नयी कहानियों में 'परिन्दे', 'मिस पाल' तथा 'मलबे का मालिक' आदि कहानियाँ उल्लेखनीय हैं।

वातावरण के प्रस्तुतीकरण की दो पद्धतियाँ हैं। पहले प्रकार में विषयारम्भ प्रकृति चित्रण से किया जाता है। इस प्रकार के प्रकृति-चित्रण में कहानी का प्रतिपाद्य सम्पूर्णतः ध्वनित हो जाता है। प्रकृति के खण्ड-चित्रों के विधान के द्वारा कथानक के अर्थ की विवृत्ति होती है और प्रतीक-पद्धति से कथानक का धरातल रसात्मक हो जाता है। प्रकृति का आधार पात्रों की स्थिति को प्राणमय बना देता है।

दूसरे प्रकार की पृष्ठभूमि में देश-काल और परिस्थितियों का आञ्चलिक और स्थानीय रंग उपस्थित किया जाता है। कृतिकार का रचना-कौशल इस बात में है कि वह जीवन की विभिन्न वस्तु-स्थितियों को देश और काल के परिवेश में इस प्रकार प्रस्तुत करे कि स्थानीय चित्र प्रभावपूर्ण हो जाय। वृन्दावनलाल वर्मा की कहानी 'शरणागत' में बुन्देलखण्ड की झलक और उपेन्द्रनाथ अश्क की कहानी 'डाची' में प्रान्तीय भाषा, रीति-रिवाज, वेश-भूषा और क्रिया-कलाप का ऐसा ही चित्र-विधान दिखलायी पड़ता है। इसी प्रकार विभिन्न तत्त्वों के सामूहिक संगठन की दृष्टि से परिवेश की परिधि भी निर्धारित की जाती है। कहानी के इतिवृत्त को विभिन्न परिच्छेदों एवं परिस्थितियों में विभाजित कर दिया जाता है। प्रत्येक विच्छेद का अपना एक अलग परिवेश होता है, जो अपने में पूर्ण होता है।

वातावरण कहानी के इष्ट-प्रतिपादन के लिए और प्रभाव की एकता स्थापित करने के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। करुणा, आश्चर्य, प्रेम, वात्सल्य आदि की सरसता वातावरण के प्रभाव से मुखरित होती है। वातावरण का प्रभाव मानसिक होता है। वह कथ्य की प्रेषणीयता के लिए पाठक के मानस को तैयार करता है। कुछ कहानियों में तो वातावरण इतना प्रधान होता है कि वह अंगी का रूप धारण कर लेता है। ऐसी वातावरण-प्रधान कहानियाँ प्रभाव की दृष्टि से बड़ी सजीव और कल्पनाश्रयी होती हैं।

भाषा-शैली

भावों को अभिव्यक्ति प्रदान करने का माध्यम भाषा है और अभिव्यक्ति का ढंग शैली है। सरल एवं बोधगम्य भाषा के द्वारा

ही कहानी को प्रभावशाली बनाया जा सकता है। भाषा की क्लिष्टता और दुरूहता से कथन का अभिप्राय स्पष्ट नहीं हो पाता और कहानी अस्वाभाविक हो जाती है। काल और पात्र की यथार्थ अभिव्यक्ति के लिए भाषा में स्वाभाविकता अपरिहार्य है। भाषा जितनी ही सरल और भावाभिव्यञ्जक होगी, उतनी ही प्रभावशाली होगी। प्रेमचन्द की कहानियों का प्रभाव पाठकों पर इसीलिए पड़ता है कि उनकी भाषा अत्यन्त सरल और सरस है।

भाषा को समर्थ और प्रभावयुक्त बनाने के लिए शब्दों के चयन पर विशेष ध्यान देना पड़ता है। चित्रात्मकता एवं प्रवाहमयता के साथ-साथ अर्थ की उपयुक्ता भी अपेक्षित है। स्वाभाविक भाषा संवेदनशील होती है। विभिन्न सन्दर्भों में कौन-सा शब्द सही चेतना एवं अर्थ को व्यंजित कर सकता है, इसका चुनाव रचनाकार की कलात्मक संवेदना पर निर्भर करता है। कहानी का आकार अत्यन्त लघु होता है, अतएव सूक्ष्म सन्दर्भों को स्पष्ट करने के लिए भाषा में संकेतों का प्रयोग करना आवश्यक हो जाता है। इस प्रकार की सांकेतिक भाषा से व्यञ्जना-शक्ति बढ़ जाती है। आज की कहानियों में अनुभूति की प्रामाणिकता को चित्रित करने के लिए सांकेतिक भाषा का प्रयोग बढ़ गया है।

साधारण से साधारण कथानक में भी कुशल लेखक अपनी सुन्दर शैली से प्राण-प्रतिष्ठा कर देता है। शब्दों की सम्मोहन-शक्ति के द्वारा वह पाठकों को मन्त्रमुग्ध कर देता है। आधुनिक कहानियों में मनस्तत्त्वों के निरूपण और अवचेतन मन के विभिन्न स्तरों को खोलने के लिए विभिन्न प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया जा रहा है। इसी प्रकार प्रस्तुतीकरण की दृष्टि से कुछ नयी विधियों का प्रयोग किया जाने लगा है। कहीं कहानीकार परिदृश्य पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता हुआ कमेण्टरी की विधि अपनाता है (अमरकान्त की 'घुड़सवार' कहानी) और कहीं 'फ्लैश बैक' यानी पूर्वदीप्ति की विधि का अनुसरण करते हुए पूर्व घटित अंश को सहज रूप से वर्तमान से सन्दर्भित करके प्रस्तुत करता जाता है। शिवप्रसाद सिंह की **'कर्मनाशा की हार'** इसका सशक्त उदाहरण है। दूरवीक्षण और अन्वीक्षण की विधियाँ भी वैज्ञानिक जगत् के अनुभव से ग्रहण की गयी हैं। एक में कहानीकार दूरस्थ वस्तु को निकटस्थ के रूप में चित्रित करता है, दूसरी में वह वस्तु की उस सूक्ष्मता को बहुत बारीकी से प्रस्तुत करता है जो साधारणतः लोगों को दिखायी नहीं देती। भीष्म साहनी की कहानी 'अहं ब्रह्मास्मि' रिपोर्ताज शैली में लिखी गयी ऐसी ही कहानी है जो आधुनिक युग में एक नयी साहित्यिक विधि से सम्बद्ध है।

उद्देश्य

कहानी का उद्देश्य पुष्प में गन्ध की भाँति छिपा रहता है। प्राचीन कहानियों का उद्देश्य आध्यात्मिक विवेचना अथवा नैतिक उपदेश प्रदान करना था। कालान्तर में मनोरञ्जन करना अथवा महान् चरित्र के शौर्य आदि गुणों का प्रदर्शन करना कहानी का उपजीव्य बन गया। मनोरंजन अथवा उपदेश के साथ ही शाश्वत सत्य का उद्घाटन करना भी कथा का एक महत्त्वपूर्ण प्रयोजन है।

प्रेमचन्द-युग में आदर्श की स्थापना और शाश्वत सत्य का उद्घाटन कहानी का प्रमुख उद्देश्य बन गया था।

कोई भी घटना, परिस्थितियाँ और कार्य लेखक के लिए निरपेक्ष रूप से महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। प्रत्येक कहानी के मूल में कोई केन्द्रीय भाव अवश्य छिपा होता है, जो कहानी का मौलिक आधार बनता है। एक ही घटना को लेकर अनेक प्रकार की कहानियाँ लिखी जा सकती हैं, परन्तु प्रत्येक का दृष्टिकोण भिन्न होने के कारण कथा का रूप बदल जाता है। यही कहानीकार की मौलिकता है। कहानी का केन्द्रीय भाव ही वह हेतु या उद्देश्य है, जिसके लिए कहानी लिखी जाती है। संवेदना की विशिष्ट इकाई के मूल में लेखक का एक निर्दिष्ट लक्ष्य होता है। प्रभावान्विति और संवेदनात्मक इकाई के कारण ही कहानी मुक्तक काव्य और एकांकी की समीपवर्ती कही जाती है।

हिन्दी कहानी की विकास-यात्रा

देश में कहानी का आरम्भ वैदिक युग में ही हो गया था। ऋग्वेद के यम-यमी, पुरूरवा-उर्वशी आदि के संवाद, उपनिषदों के रूपात्मक व्याख्यान, नहुष, ययाति आदि के उपाख्यान तथा ऋषियों-मुनियों की कथाएँ भारतीय कहानी के प्राचीनतम रूप हैं। लौकिक संस्कृत में उपदेश और नीतिप्रधान कथाओं का प्राचुर्य मिलता है। वृहद्कथामंजरी, कथासरित्सागर, पंचतन्त्र, हितोपदेश आदि ग्रन्थ तथा मुंज, भोज, विक्रमादित्य आदि के शौर्य और प्रणय की गाथाओं को लेकर लिखी गयी रचनाएँ कहानी के ही प्राचीन रूप हैं। संस्कृत के पश्चात् पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषाओं में बौद्ध और जैन धर्म सम्बन्धी अनेकानेक कथायें लिखी गयी हैं। अपभ्रंश भाषा में चरित्र-काव्यों तथा कथा-काव्यों का लम्बा इतिहास मिलता है।

हिन्दी में आधुनिक कहानी के उदय के पूर्व प्राचीनकाल में संस्कृत और प्राकृत की परम्परा में कथा-साहित्य की रचना हुई।

इसका आरम्भिक रूप काव्यमय है। इस कथा-साहित्य की एक परम्परा चारणों तथा अन्य कवियों द्वारा विकसित हुई, जिसमें ऐतिहासिक, पौराणिक कथा-नायकों में कल्पना का पुट देकर उनके चरित्र-श्रवण से पुण्य का लोभ दिखाया गया। कथा-साहित्य की दूसरी परम्परा सूफियों द्वारा विकसित हुई। मृगावती, मधु-मालती, पद्मावत, चित्रावली, ज्ञानदीप, इन्द्रावती आदि ऐसे ही प्रेमाख्यानक काव्य हैं।

हिन्दी कहानियों का तीसरा प्राचीन रूप 'किस्सा', 'वृत्तान्त' आदि के रूप में मिलता है। भारतेन्दुयुगीन पत्र-पत्रिकायें इस प्रकार की कहानियों से भरी पड़ी हैं। सिंहासनबत्तीसी, बैतालपचीसी, माधवानल-कामकन्दला, राजा भोज का सपना, रानी केतकी की कहानी, देवरानी-जेठानी आदि इसी प्रकार की कहानियाँ हैं। इसी प्रकार संस्कृत-भाषा में कथा-साहित्य की जो पद्धति प्रारम्भ हुई, वह किंचित् परिवर्तन के साथ हिन्दी में भारतेन्दु तक चली आयी है। ये कहानियाँ, कथा, आख्यायिका, वृत्तान्त, वार्त्ता, किस्सा आदि अनेक रूपों में लिखी जाती रही हैं। इनका कोई स्वरूप भी निर्धारित नहीं हो सकता। ये कहानियाँ या कथाएँ गद्य-पद्य दोनों माध्यमों से लिखी जाती थीं। इनमें अप्राकृतिक तथा अतिप्राकृतिक तत्त्वों का प्राधान्य रहता था। भूत-प्रेत, पशु-पक्षी आदि कथा के विकास में सहायक होते थे। घटनाएँ नितान्त अविश्वसनीय और आश्चर्यजनक रहती थीं। इनमें स्वाभाविकता का अभाव था।

आधुनिक कहानी परम्परा और स्वरूप की दृष्टि से प्राचीन कहानी से भिन्न है। आज की कहानी का एक निश्चित लक्ष्य होता है। वह अस्वाभाविक घटनाओं और अतिमानवीय पात्रों का घटाटोप नहीं होती है। आज की कहानी जीवन के बहुत निकट आ गयी है। वह जीवन में यथार्थ की प्रतिच्छाया है। वह आज अभिव्यक्ति का सर्वाधिक सशक्त माध्यम बन गयी है। आज की कहानी मानव जीवन के किसी एक पक्ष अथवा घटना का सूक्ष्मता के साथ चित्रण करती है। इसका सम्बन्ध सामयिक जीवन से होता है। वह यथार्थ को प्रस्तुत करती है।

यूरोपीय कहानी का प्रभाव हिन्दी-कहानी पर आरम्भ में बंगला-कहानी के माध्यम से पड़ा। अमेरिका और यूरोप में आधुनिक कहानी का जन्म 19वीं शताब्दी के प्रथम चरण में हो गया था। वहाँ के प्रारम्भिक कहानी-लेखकों में हाफमैन, जेकब, ग्रिम, हाथर्न, पो, ब्रेटाहार्ट आदि का नाम लिया जाता है। पो ने सर्वप्रथम कहानी का स्वरूप और उसके लक्षण निर्धारित किये। इसी समय रूस में गांगोल, तुर्गनेव आदि कहानियाँ लिख रहे थे।

आधुनिक हिन्दी-कहानी का प्रारम्भ एक प्रकार से द्विवेदीकाल में हुआ। बंगला-भाषा से सम्पर्क, नयी शिक्षा-पद्धति, सामाजिक एवं राजनीतिक आन्दोलन, गद्य के परिष्कार आदि के परिणामस्वरूप इस विधा का सूत्रपात हुआ। सरस्वती, इन्दु, सुदर्शन आदि पत्रिकायें हिन्दी कहानियों की जननी हैं।

हिन्दी की प्रथम आधुनिक कहानी कौन है, इस पर विवाद है। इस सम्बन्ध में सात कहानियों के नाम गिनाये जाते हैं—रानी केतकी की कहानी, इन्दुमती, गुलबहार, प्लेग की चुड़ैल, ग्यारह वर्ष का समय, पण्डित और पण्डितानी तथा दुलाईवाली। रचनाकाल की दृष्टि से इनमें रानी केतकी की कहानी (इंशाअल्ला खां) सबसे पुरानी है। किन्तु कहानी-कला की दृष्टि से उसको आधुनिक नहीं कहा जा सकता। इसकी रचना प्राचीन कथा पद्धति पर हुई है। कथानक, पात्र तथा भाषा सभी इसे प्राचीन कथाओं के निकट ले जाते हैं। शेष छह कहानियों में किशोरीलाल गोस्वामी की 'इन्दुमती' प्रथम है। यह सन् 1900 में 'सरस्वती' में छपी थी। आरम्भ में कुछ आलोचक इसे मौलिक कहानी नहीं मानते थे। वे उसे शेक्सपीयर के 'टेम्पेस्ट' का रूपान्तर प्रमाणित करते थे और रामचन्द्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय' अथवा बंग-महिला की 'दुलाईवाली' को हिन्दी की प्रथम कहानी मानते थे। किन्तु अब यह स्पष्ट हो गया है कि 'इन्दुमती' एक मौलिक कहानी है। अतः यह हिन्दी की प्रथम आधुनिक कहानी मानी जा सकती है।

द्विवेदी-युग में मौलिक और अनूदित दोनों प्रकार की कहानियाँ लिखी गयीं। एक ओर संस्कृत, बंगला, अंग्रेजी आदि भाषाओं से कहानियों के अनुवाद हुए, दूसरी ओर जीवन की झाँकी उपस्थित करनेवाली आदर्शवादी और यथार्थवादी मौलिक कहानियों का भी सृजन हुआ। इस युग के प्रमुख कहानीकारों में किशोरीलाल गोस्वामी, गिरिजाकुमार घोष, गोपालराम गहमरी, विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक', जयशंकर प्रसाद और प्रेमचन्द के नाम उल्लेखनीय हैं। इनके द्वारा सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, वैज्ञानिक आदि सभी विषयों पर कहानियाँ लिखी गयीं। इस काल में घटनाप्रधान, चरित्रप्रधान, वातावरणप्रधान तथा भावप्रधान कहानियों की अधिकता रही है। शैली की दृष्टि से इस समय आत्म-कथात्मक से लेकर स्वप्न-शैली तक में कहानियाँ लिखी गयी हैं। कहानीकारों में पार्वतीनन्दन, सूर्यनारायण दीक्षित तथा रूपनारायण मुख्य हैं। गदाधरसिंह ने 'कादम्बरी' का, जगन्नाथप्रसाद त्रिपाठी ने 'हर्षचरित' और 'रत्नावली' का तथा सूर्यनारायण दीक्षित ने 'जैमिनीकुमार' का अनुवाद किया। बंगला की कहानियों का अनुवाद पार्वतीनन्दन, बंग महिला आदि ने प्रस्तुत किया।

मौलिक कहानीकारों में किशोरीलाल ने सामाजिक कहानियाँ लिखीं। 'चन्द्रिका', 'इन्दुमती' और 'गुलबहार' आपके कहानी-

संग्रह हैं। इनकी कहानियों पर जासूसी उपन्यासों का प्रभाव देखा जा सकता है। रामचन्द्र शुक्ल मूलतः निबन्धकार और आलोचक के रूप में प्रसिद्ध हैं, किन्तु उन्होंने 'ग्यारह वर्ष का समय' नामक एक कहानी भी लिखी। इसी प्रकार महावीरप्रसाद द्विवेदी ने कुछ कहानियाँ लिखीं जो 'सरस्वती' के विभिन्न अंकों में प्रकाशित हुईं। 'स्वर्ण की झलक' आपकी प्रसिद्ध कहानी है। इस समय के जासूसी कहानियाँ लिखनेवालों में गोपालराम गहमरी अग्रगण्य हैं। 'त्रिवेणी', 'तीन तहकीकात' तथा 'गल्पपंचक' आपके कहानी-संग्रह हैं। इन कहानियों में उपदेश की प्रवृत्ति पायी जाती है।

द्विवेदी-युग के उत्तरार्द्ध में हिन्दी-कहानी का उत्कर्ष दिखायी पड़ता है। इसमें कहानी-कला का परिष्कार होता है, शिल्प में प्रौढ़ता आती है और घटनाओं की अपेक्षा चरित्र को महत्त्व मिलता है। गुलेरी जी की प्रसिद्ध कहानी 'उसने कहा था' इसी समय 'सरस्वती' में छपी। इसके अतिरिक्त उनकी दो अन्य कहानियाँ 'सुखमय जीवन' तथा 'बुद्धू का काँटा' भी प्रकाश में आयी। 'उसने कहा था' कहानी कलात्मक प्रौढ़ता, नये शिल्प, सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चरित्र-चित्रण आदि की दृष्टि से अपने समय तक की सर्वोत्कृष्ट कहानी है। चतुरसेन शास्त्री इस युग के अन्तिम चरण के कहानीकार हैं। 'रजकण', 'अक्षत', 'बाहर भीतर', 'दुखवा मैं कासे कहूँ' आदि आपके प्रमुख संग्रह हैं। आपकी कहानियाँ सामाजिक यथार्थ को लेकर चली हैं। प्रसाद और प्रेमचन्द ने भी इसी समय हिन्दी-कहानी-जगत् में प्रवेश किया।

सन् 1911 में 'इन्दु' नामक पत्रिका का प्रकाशन हुआ और उसी वर्ष प्रसाद की पहली कहानी 'ग्राम' प्रकाशित हुई। उसके बाद प्रसाद जी 'इन्दु' तथा अन्य पत्रिकाओं में निरन्तर कहानियाँ लिखते रहे। ये कहानियाँ पाँच संग्रहों—छाया, प्रतिध्वनि, आकाशदीप, आँधी और इन्द्रजाल में संकलित हैं। प्रसाद जी की कहानियों की पृष्ठभूमि सांस्कृतिक है जिसमें भावुकता, कल्पना और रोमान्स का समन्वय मिलता है। वे प्रेम के उन्मुक्त रूप के पक्षधर थे। उनकी कहानियों में प्रेम के विविध पक्ष और नारी-चरित्र के अनेक रूप देखने को मिलते हैं। प्रसाद जी का नाटककार-रूप भी उनकी कहानियों में देखा जा सकता है। 'आकाशदीप', 'पुरस्कार' आदि कहानियों में नाटकीय संवादों और अभिनयात्मक पद्धति से पात्रों के चरित्र विकसित होते हैं। उनकी कहानियों की भाषा संस्कृतनिष्ठ और काव्यात्मक है। भारतीय संस्कृति के परिवेश में लिखी गयी उनकी कहानियाँ आदर्शवादी वर्ग में आती हैं।

हिन्दी में प्रेमचन्द की पहली कहानी 'सौत' सन् 1915 में 'सरस्वती' में छपी थी, यद्यपि उसके पूर्व वे धनपतराय और नवाबराय के नाम से उर्दू में कई कहानियाँ लिख चुके थे। सन् 1936 तक उन्होंने लगभग 300 कहानियों की रचना की, जो हिन्दी की प्रमुख पत्रिकाओं (सरस्वती, माया, जागरण, मर्यादा, माधुरी, हंस, विशाल भारत आदि) में छपती रहीं। प्रेमचन्द अपने युग के श्रेष्ठतम कहानीकार थे। उन्होंने हिन्दी कहानी को विस्तृत आयाम दिया और कहानी को केवल मनोरंजन तक सीमित न रखकर जीवन से जोड़ा। कथानक के आधार पर उनकी कहानियों के तीन वर्ग बनाये जा सकते हैं– घटनाप्रधान, चरित्रप्रधान और भावप्रधान। उन्होंने अपने समय तक प्रचलित सभी शैलियों को अपनाया तथा सामाजिक, राजनीतिक, पौराणिक, ऐतिहासिक आदि सभी विषयों पर कहानियाँ लिखीं। प्रेमचन्द की प्रारम्भिक कहानियों में घटनाओं की प्रधानता है। दूसरे चरण की कहानियों में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं को उठाकर उनका आदर्शमूलक समाधान खोजने की चेष्टा की गयी है।

राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह इस युग के आदर्शवादी कहानीकार हैं। 'कानों में कँगना' उनकी प्रसिद्ध कहानी है। विश्वम्भरनाथ और ज्वालादत्त शर्मा भी इसी युग के कहानीकार हैं। विश्वम्भरनाथ की कहानियों का एक संग्रह 'घूँघटवाली' उपलब्ध है। विश्वम्भरनाथ ने नारी-जीवन के विभिन्न पक्षों को अपनी कहानियों में उद्घाटित किया है। शर्मा जी भी प्रेमचन्द की परम्परा के कहानीकार हैं। उन्होंने अपनी कहानियों में सामाजिक कुरीतियों और अंधविश्वासों पर प्रबल कशाघात किया है। उनका दृष्टिकोण सुधारवादी था। वृन्दावनलाल वर्मा इस युग के ऐतिहासिक कथाकार हैं। इनकी कहानियों में बुन्देलखण्ड का जीवन उभरकर आया है। 'राखी', 'कलाकार का दण्ड', 'युद्ध के मोर्चे से' आदि इनकी लोकप्रिय कहानियाँ हैं। जी० पी० श्रीवास्तव की कहानियाँ हास्य-व्यंग्य की शैली में लिखी गयी हैं। 'लम्बी दाढ़ी' उनकी अच्छी कहानियों का संग्रह है।

द्विवेदी-युग के पश्चात् हिन्दी-कहानी में शिल्प एवं विषय दोनों दृष्टियों से परिवर्तन होता है। सामयिक, राजनीतिक एवं सामाजिक परिस्थितियाँ हिन्दी-कहानी को भी प्रभावित करती हैं। राजनीति के क्षेत्र में यह समय अत्यन्त कोलाहल एवं अशान्ति का था। गाँधी के नेतृत्व में स्वाधीनता-आन्दोलन प्रबल होता जा रहा था। उधर सरकारी दमन भी उग्र होता जा रहा था। सन् 1914-19 में प्रथम विश्वयुद्ध हुआ। राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्थितियों पर उसका व्यापक प्रभाव, सन् 1930 की गोलमेज परिषद्, सन् 1939 में काँग्रेस मन्त्रिमण्डलों द्वारा त्यागपत्र, द्वितीय विश्वयुद्ध, सन् 1942 की जनक्रान्ति और 15 अगस्त, 1947 ई० को भारत का स्वाधीन होना इन घटनाओं की पृष्ठभूमि में हिन्दी-कहानी का स्वरूप-परिवर्तन स्वाभाविक था। फलतः घुटन, निराशा, कुण्ठा का स्वर कहानी में आ गया। इस समय सामाजिक युग-बोध और यथार्थपरक कहानियाँ लिखी गयीं। कुछ कहानियाँ आत्मपरक दृष्टिकोण को भी लेकर लिखी गयीं। इस युग की कहानियाँ कथानक की दृष्टि से दो प्रकार की हैं—स्थूल कथानकवाली कहानियाँ, सूक्ष्म कथानकवाली कहानियाँ। विषय की दृष्टि से इस युग में सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, राजनीतिक, सैद्धान्तिक और ऐतिहासिक कहानियाँ लिखी गयीं। इस युग की कहानियों का

सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण लक्षण है–उनका शैलीगत वैविध्य। नवीनता की दृष्टि से नाटकीय शैली (यशपाल : उत्तराधिकारी, रांगेय राघव : मृत्यु), पत्रात्मक शैली (अज्ञेय : सिग्नलर), डायरी-शैली (इलाचन्द्र जोशी : मेरी डायरी के नीरस पृष्ठ), प्रतीक-शैली (जैनेन्द्र : पाजेब), स्वगत-शैली (जैनेन्द्र : क्या हो) तथा स्वप्न-शैली (अज्ञेय : चिड़ियाघर) विशेष ध्यान आकर्षित करती हैं।

इस युग के प्रमुख कहानीकार हैं—जैनेन्द्रकुमार, सियारामशरण गुप्त, अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी, यशपाल, भगवतीचरण वर्मा, अमृतलाल नागर, उपेन्द्रनाथ अश्क, रांगेय राघव, विष्णु प्रभाकर, अमृतराय आदि। जैनेन्द्रकुमार बुद्धिवादी लेखक हैं। उनकी कहानियों में व्यक्तिगत चरित्र एवं जीवन-दर्शन का वैशिष्ट्य मिलता है। उनके पात्रों का चरित्र-विश्लेषण मानसिक द्वन्द्व एवं घात-प्रतिघात से हुआ है। सियारामशरण गुप्त आदर्शवादी कहानीकार हैं। वे पिछली परम्परा के अधिक निकट हैं। उनकी कहानियों का संग्रह 'मानसी' नाम से प्रकाशित हुआ है। अज्ञेय मनोवैज्ञानिक कहानीकार हैं। इनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं—'विपथगा', 'परम्परा', 'कोठरी की बात', 'शरणार्थी' और 'जयदोल'। अज्ञेय फ्रायड के दर्शन से बहुत प्रभावित हैं, इसीलिए उनकी कहानियों में सेक्स सम्बन्ध, कुण्ठा और घुटन का मनोविश्लेषण मिलता है। यशपाल मार्क्सवादी विचारधारा के प्रगतिशील लेखक हैं। वर्ग-वैषम्य और आर्थिक-वैषम्य उनकी कहानियों में मुख्य रूप से उभरे हैं। भगवतीचरण वर्मा ने अपनी कहानियों में मध्यवर्गीय जीवन को यथार्थवादी अभिव्यक्ति दी है। उनकी कहानियों का धरातल अपेक्षाकृत वैयक्तिक एवं बौद्धिक है।

अमृतलाल नागर यथार्थवादी कहानीकार हैं। ग्राम्य जीवन की नग्न और वास्तविक परिस्थितियाँ उनकी कहानियों में पायी जाती हैं। उनकी शैली व्यंग्यात्मक है। अश्क जी की कहानियों में निम्न-वर्ग का यथार्थपरक चित्रण मिलता है। 'पलंग' उनकी कहानियों का अच्छा संग्रह है। उन्होंने समस्या प्रधान एवं मनोवैज्ञानिक कहानियाँ भी लिखी हैं। रांगेय राघव की कहानियाँ प्रगतिशील दृष्टिकोण से प्रभावित हैं। अमृतराय भी समाजवादी विचारधारा के कहानीकार हैं। 'एक साँवली लड़की', 'कस्बे का एक दिन' आदि उनकी श्रेष्ठ कहानियाँ हैं।

स्वतन्त्रता के बाद आधुनिक कहानी में एक युगान्तर आया है। नयी कहानी के प्रथम चरण में ग्राम-कथाओं में भी ठहराव आ गया था। मनोवैज्ञानिक फार्मूलों अथवा नारेबाजी से भरा यथार्थवाद अब आकर्षण की वस्तु नहीं रह गया। इसी समय ग्रामीण क्षेत्रों से आये लेखकों ने ताजगी से भरे ग्राम-जीवन को नये शैली-शिल्प में प्रस्तुत किया। उनकी कहानियाँ पहले की कहानियों से भिन्न थीं। इन कथाकारों ने खण्डित जीवन की विभिन्न समस्याओं को लेकर कहानी के क्षेत्र में शिल्प और विषय की दृष्टि से नये प्रयोग किये हैं।

युगीन परिस्थितियों ने कहानी के स्वरूप-निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। स्वतन्त्रता के बाद देश के समक्ष अनेक समस्याएँ उपस्थित हो गयी हैं। सब कुछ पुराना ध्वस्त हो रहा और नयी रूप-रेखा प्रस्तुत हो रही है। सामाजिक जीवन और विचार दोनों ही क्षेत्रों में उत्क्रान्ति हो रही है। फलतः साहित्यकार के ऊपर नयी जिम्मेदारियाँ आयी हैं। प्रतिदिन स्थितियों में परिवर्तन हो रहा है और इस नवीन सामयिक सन्दर्भ से नयी कहानी भी प्रभावित है। कहानीकारों के सामने भाव-बोध के नवीन स्तर, सौन्दर्य-बोध के नये आयाम और कल्पना के नये क्षितिज उद्घाटित हो रहे हैं।

प्रेमचन्दोत्तर कहानियों में पिछले बीस वर्षों तक शहरी मध्यवर्गीय एवं निम्न-मध्यवर्गीय जीवन का चरित्र अंकित किया जाता रहा है। बाद के कथाकारों का ध्यान ग्रामीण सन्दर्भों की ओर गया। गाँव का जीवन तेजी से बदल रहा है। इस परिवर्तित जीवन-धरातल का स्वरूप आञ्चलिक कथाओं में बड़े सजीव और यथार्थ रूप में उभरता रहा है। स्वातन्त्र्योत्तर काल में कहानी के अन्तर्गत यान्त्रिक जड़ता, व्यक्ति की कुण्ठा, मानसिक उलझन, संक्रमणकालीन मनःस्थिति आदि का चित्रण हो रहा है। नयी पीढ़ी के इन कथाकारों के प्रथम वर्ग में रेणु, मार्कण्डेय, भारती, निर्गुण, शैलेश मटियानी, शिवप्रसाद सिंह, शेखर जोशी, शिवानी आदि प्रमुख हैं। दूसरे वर्ग के कहानीकारों में मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, मन्नू भण्डारी, निर्मल वर्मा, रघुवीर सहाय, भीष्म साहनी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इनमें नगर-जीवन की जटिलताओं का विशेष अंकन हुआ है। इस युग की कहानियों में भोगे हुए जीवन को अभिव्यक्ति मिली है तथा संवेदना और सूक्ष्म निरीक्षण के सशक्त धरातल प्रकट हुए हैं। शहर और गाँव की भेदक-रेखा छोटी हुई है। शब्द-प्रयोग और शैली का तौर-तरीका बदला है। बिम्ब और सांकेतिकता के नये सन्दर्भ दिखलायी पड़ते हैं।

नयी कहानी का नया आन्दोलन जन्म ले रहा है और नये एवं पुराने के विवाद का दौर चल रहा है। आरम्भ में कहानी का जो शिल्प स्वीकार किया गया था, उसका उत्तरोत्तर विकास हुआ है। साठोत्तरी पीढ़ी के कहानीकारों की दृष्टि निःसन्देह अधिक खरी और प्रश्नात्मक है। ज्ञानरंजन की 'घण्टा', काशीनाथ सिंह की 'सुख', दूधनाथ सिंह की 'रक्तपात', रवीन्द्र कालिया की 'नौ साल छोटी पत्नी', महेन्द्र भल्ला की 'एक पति के नोट्स' आदि कहानियाँ युग के नये भयावह विडम्बनापूर्ण सम्बन्धों का साक्षात्कार करती हैं। गिरिराज किशोर, विजयमोहन सिंह, गोविन्द मिश्र, ममता कालिया, प्रयाग शुक्ल आदि की कहानियाँ आज के जटिल सन्दर्भों को उजागर करती हैं। इस प्रकार आज की हिन्दी कहानी शिल्प और कथ्य दोनों दृष्टियों से विश्व की कहानियों के समकक्ष आ गयी है।

संकलित कहानियों का सारांश

खून का रिश्ता

खाट की पाटी पर बैठा चाचा मंगलसेन हाथ में चिलम थामे मन-ही-मन भतीजे की शानदार शादी की बात सोच रहा था। बारात में वह समधियों के घर बैठा है। हाथ में दूध का गिलास लिये घूँट-घूँट पी रहा है। दूध पीते कभी बादाम की गिरी मुँह में आती है, कभी पिस्ते की। कोई उसके पास आकर पूछता है और दूध लाऊँ चाचा जी? थोड़ा-सा और? अच्छा ले आओ, आधा गिलास। तम्बाकू की कड़वाहट से भरे मुँह में मिठास आ गयी। स्वप्न भंग हो गया। मन सगाई में जाने के लिए ललक उठा। सचमुच आज सगाई का दिन था। थोड़ी देर बाद ही सगे-सम्बन्धी सगाई में जायेंगे। मंगलसेन को खाट पर बैठना असम्भव हो गया। बदन में छँटाक-भर खून था, मगर ऐसा उछलने लगा कि बैठने नहीं देता था। उसी वक्त घर का पुराना नौकर सन्तू आ गया और मंगलसेन के हाथ से चिलम लेकर पीने लगा। फिर बोला, ''तुम्हें सगाई पर नहीं ले जायेंगे चाचा।'' मंगलसेन ने सोचा सन्तू मजाक कर रहा है। उसने सन्तू से कहा, ''बड़ों के साथ मजाक नहीं किया करते, कई बार कहा। मुझे नहीं ले जायेंगे, तो क्या तुम्हें ले जायेंगे?'' सन्तू ने कहा कि वीरजी आये हैं, वे कहते हैं कि सगाई डलवाने सिर्फ बाबूजी जायेंगे और कोई नहीं। ऊपर चलो, सब खाना खा रहे हैं, तुम्हें नहीं ले जायेंगे चाहे दो-दो रुपये की शर्त लगा लो। ऊपर रसोईघर में सचमुच बहस चल रही थी। रसोईघर में दीवार से पीठ टिकाये बाबूजी बैठे थे। पुत्र वीरजी और बेटी मनोरमा दोनों भाई-बहन बैठे खाना खा रहे थे। वीरजी ने कहा कि मेरी सगाई सवा रुपये में होगी और केवल बाबूजी जायेंगे। मनोरमा कहती है कि मैं भी जाऊँगी। आजकल लड़कियाँ भी जाती हैं। इसी बीच मंगलसेन ने अन्दर झाँका। बाबूजी ने कहा आओ मंगलसेन, देखो यहाँ कौन बैठा है? वीरसिंह ने कहा, ''नमस्ते चाचाजी।'' बाबूजी ने कहा, ''उठकर चाचाजी को पालागन करो, तुम्हें इतना भी अक्ल नहीं है? वीरसिंह ने वैसा ही किया फिर बाबू जी ने मंगलसेन से कहा कि मंगलसेन जरा आकर टाँगें तो हिलाओ। माँ जी ने घूरकर देखा, ''नौकरों के सामने तो मंगलसेन के साथ इस तरह रुखाई से नहीं बोलना चाहिए।''

मंगलसेन को अपनी हैसियत पर बड़ा नाज था। किसी जमाने में वह फौज में रह चुका था। इस कारण वह अब भी सिर पर खाकी पगड़ी पहनता था। ऊँचा खानदान और शहर के धनी-मानी भाई के घर रहना, ऐंठता नहीं तो क्या करता। वह बाबूजी का चचेरा भाई था। वह गरीब था। गाँव से आकर वह शहर में बाबूजी के घर में रहता था और काम में हाथ बटाता था। नाटा कद, सूखा शरीर और मैले-कुचैले कपड़े पहन कर फौज का मोटा बूट पहनता था। सगाई में जाने के लिए लम्बी बहस के बाद तय हुआ कि बाबूजी के साथ मंगलसेन जायेंगे। उन्हें तैयार होने के लिए कहा गया तो ऐसे वेश में सामने आये जैसे कोई जोकर हो। फिर उन्हें दूसरों के कपड़े दिये गये। एक पगड़ी भी दी गयी। मंगलसेन का कायाकल्प हो गया। फिर वे समधियों के घर गये। बहुत कुछ मिला, जबकि बाबूजी केवल सवा रुपये की माँग दोहराते हैं। मंगलसेन की बड़ी आवभगत हुई। दूध पीते हुए मंगलसेन ने कहा कि मेरा भतीजा एम० ए० है क्या लड़की कुछ पढ़ी-लिखी है? घरातियों ने बताया कि लड़की बी० ए० पास है। जब घर के काम-धंधे जानने के बारे में बताया कि थोड़ा-बहुत जानती है तो मंगलसेन कहा, ''थोड़ा-बहुत क्यों? सगाई के बाद दोनों भाई लौट पड़े। मंगलसेन के कंधे पर थाल था, लाल रंग के रूमाल से ढका हुआ। घर पहुँचते ही मनोरमा दौड़कर मंगलसेन के हाथ से थाल झपट लिया और कहा, ''बाबूजी की पगड़ी पहन ली तो बाबूजी ही बन बैठे हैं। लाइए मुझे दीजिए। सब हँसने लगे। सारा कार्यक्रम चलता रहा। इसी बीच चाँदी का एक चम्मच खो गया। सबका शक मंगलसेन पर था। बाबूजी उसे सबके सामने फटकारा। मंगलसेन गिरकर बेहोश हो गया। किन्तु एक लड़के ने चम्मच लाकर दिया। वहीं कहीं गिरा हुआ था। सन्तू मंगलसेन को हवा देकर होश में लाने के लिए प्रयास कर रहा था।

पंचलाइट

पंचलाइट का अर्थ है पेट्रोमेक्स अथवा गैस की लालटेन। रेणु जी द्वारा लिखित इस कहानी में ग्रामीण जीवन का वास्तविक चित्र खींचा गया है। महतो टोली में गाँव के कुछ अशिक्षित लोग हैं। उन्होंने रामनवमी के मेले से एक पेट्रोमेक्स खरीदा। इस पेट्रोमेक्स को गाँववाले 'पंचलैट' कहकर पुकारते थे। पंचलैट खरीदने के बाद जो दस रुपये बच गये थे, उनसे पूजा की सामग्री आ गयी। सबको 'पंचलैट' आने की प्रसन्नता थी। इस खुशी में कीर्त्तन का आयोजन किया गया। थोड़ी देर में टोली के सभी लोग 'पंचलैट' देखने के लिए एकत्र हो गये। सरदार ने 'पंचलैट' खरीदने का पूरा किस्सा लोगों को सुनाया। टोली के लोगों ने अपने सरदार और दीवान को श्रद्धा-भरी नजरों से देखा। लेकिन प्रश्न यह पैदा हुआ कि 'पंचलैट' को जलायेगा कौन? खरीदने से पहले किसी के मस्तिष्क में यह बात नहीं आयी थी। यह निर्णय हुआ कि दूसरी पंचायत के आदमी की मदद से 'पंचलैट' नहीं जलाया जायगा, चाहे वह बिना जले ही पड़ा रहे। आज किसी ने अपने घर में ढिबरी (डिबिया) भी नहीं जलायी थी। 'पंचलैट' के न जलने से पंचों के चेहरे उतर गये। राजपूत टोली के लोग उनका मजाक बनाने लगे, लेकिन सबने धैर्यपूर्वक उस मजाक को सहन किया। गुलरी काकी की बेटी मुनरी वहीं पर बैठी थी। उसे पता था कि गोधन पंचलैट जलाना जानता है, लेकिन पंचायत ने गोधन का हुक्का-पानी बन्द कर रखा था। मुनरी गोधन से प्रेम करती थी। उसने अपनी बात अपनी सहेली कनेली को बतायी। कनेली ने यह सूचना सरदार तक पहुँचा दी कि गोधन 'पंचलैट' जलाना जानता है। सभी पंच सोच-विचार में पड़ गये कि गोधन को बुलाया जाय अथवा नहीं। अन्त में उसे बुलाने का निर्णय लिया गया।

सरदार ने छड़ीदार को भेजा। लेकिन छड़ीदार के कहने से गोधन 'पंचलैट' जलाने के लिए नहीं आया। बाद में गुलरी काकी गोधन के पास गयी और उसे मनाकर ले आयी। गोधन ने पूछा कि 'स्प्रिट' कहाँ है। 'स्प्रिट' का नाम सुनकर सभी लोग उदास हो गये, लेकिन गोधन ने अपनी होशियारी से गरी के तेल की सहायता से ही 'पंचलैट' जला दिया।

पंचलैट के जलने पर सभी लोगों में प्रसन्नता की लहर दौड़ गयी। पंच गोधन को पुनः जाति में ले लेते हैं। कीर्त्तनिया लोगों ने एक स्वर में महावीर स्वामी की जय-ध्वनि की। कीर्त्तन शुरू हो गया। गोधन ने सबका दिल जीत लिया। मुनरी ने भी प्रेम-दृष्टि से गोधन की ओर देखा। सरदार ने गोधन से कहा—

''तुम्हारा सात खून माफ। खूब गाओ सलीमा का गाना।'' अन्त में, गुलरी काकी ने गोधन को रात के खाने पर बुलाया।

लाटी

कप्तान जोशी अपनी रोगिणी पत्नी बानो के साथ टीबी अस्पताल गोठिया सैनेटोरियम के बँगला नम्बर तीन में पलंग के पास दिन भर आरामकुर्सी डाले बैठा रहता था। कभी अपने हाथों से टेम्प्रेचर चार्ट भरता और कभी समय देखकर दवाइयाँ देता। बगल के मरीजों की भी बड़ी तृष्णा और चाव से सेवा करता था। कभी वह मीठे स्वर में पहाड़ी झोड़े गाता जिनकी मिठास में तिब्बती बकरियों के गले में बँधी घण्टियों की-सी छुनक रहती। पहाड़ी मरीज हुमककर कहते, ''वाह कप्तान साहब, एक और।'' कप्तान अपनी पत्नी सुन्दरी 'बानो' की ओर देख बड़े लाड़ से मुस्करा देता। बानो का गोरा चेहरा बीमारी से एकदम पीला पड़ गया था। वह दिन-रात कप्तान को टुकुर-टुकुर देखती रहती। उन दिनों गोठिया का डॉक्टर एक अधेड़ स्विस था। उसने कप्तान से कहा तुम जरा भी परहेज नहीं करते। मरीज को दवा से जीतना होगा, मुहब्बत से नहीं। कप्तान लाल पड़ गया। उन्हीं दिनों कप्तान के बूढ़े पिता का पत्र आया। पत्र में उन्होंने लिखा था कि उनके दस-बीस पूत नहीं हैं, यह बीमारी सत्यानाशी है। किन्तु कप्तान पहले की तरह अलमस्त डोलता, कभी बानो के चिकने केशों को चूमता, कभी उसकी पलकों को, कभी किसी से मजाक करता। कुछ दिन बाद कप्तान उदास रहने लगा। बानो की बड़ी-बड़ी आँखों में भी उदासी के डोरे पड़ गये। कप्तान को वे पुराने दिन याद आने लगे जब वह बानो को अपने ओवरकोट में लपेट कर अपनी देह से सटाए लम्बे चीड़ की छाया में बैठा रहता था। वह बानो की हर जिद पूरी करता था। एक दिन शाम होते ही बानो मुरझाने लगी। डॉक्टर दलाल आया और कमरा खाली करवाने का नोटिस दे दिया। कल ही मरीज को यहाँ से ले जाना होगा। मरीज तीन दिन से ज्यादा नहीं बचेगी। कप्तान का चेहरा सफेद पड़ गया। दूसरे दिन सुबह उठा तो देखा बानो पलंग पर नहीं थी। खोज हुई किन्तु बानो कहीं नहीं मिली। दूसरे दिन घाट पर बानो की साड़ी मिली थी। शायद मृत्यु से पूर्व ही बानो नदी में मृत्यु से मिलने चली गयी थी। कुछ दिन तक कप्तान उसकी साड़ी को छाती से लगाये फिरता रहा। एक साल बाद कप्तान का फिर विवाह हुआ। कप्तान की नयी पत्नी के पिता मेजर जनरल थे। चालीस तमगे लगाकर उन्होंने कन्यादान किया। पत्नी प्रभा एम0ए0 पास इकलौती लड़की थी। बहुत जल्दी कप्तान का हँसना, खिलखिलाना सब भूल कर

रह गया। चार साल में कप्तान को दो बेटे और एक बेटी देकर प्रभा ने धन-संचय की ओर ध्यान दिया। फिर एक बार नोटों की मोटी गड्डी लेकर नैनीताल घूमने गये। अब कप्तान की थोड़ी तोंद निकल आयी थी, मूँछों में अब वह ऐंठ नहीं रह गयी थी। नैनीताल ग्राण्ड होटल में दोनों टिके। विभिन्न प्रकार के भोजन पैक कराकर पहाड़ घूमने दोनों निकले। भुवाली के पास गाड़ी रुकवाकर एक छोटी-सी चाय की दूकान पर चाय पीने उतरे। दूकानदार चाय बना ही रहा था कि अलख निरंजन करते वैष्णवियों का एक दल चाय की दूकान घेरकर खड़ा हो गया। हेड वैष्णवी बड़ी मुखर और मर्दानी थी। वह बोली, ''सोचा, बामण ज्यू की दूकान की चाय छोरियों को पिलाऊँ।'' सबको देखते हुए दूकानदार बोला, अरे लाटी भी आयी है? वैष्णवी ने कहा अरे कहाँ जाएगी अभागी? प्रभा और मेजर की दृष्टि लाटी पर पड़ी। देवांगना-सी लाटी हँस दी। मेजर का शरीर सुन्न पड़ गया, वह साक्षात् बानो ही थी। गूँगी जिह्वा पर गूँगापन चेहरे पर फैल कर उसे और भोला बना रहा था। प्रभा बोली, ''क्या यह गूँगी है, हे भगवान् कैसी सुन्दरता पायी है।'' दूकानदार ने कहा, ''हाँ सरकार, यह लाटी है, इसका असली नाम क्या है पता नहीं।'' हेड वैष्णवी ने कहा, ''हमारे गुरु महाराज को इसकी देह नदी में तैरती मिली। जीभड़ी कटकर गिर गयी थी। इसके गले में मंगलसूत्र था, ब्याह हो गया होगा। इसे भयंकर क्षयरोग था। गुरु की शरण में रोग-सोक ठीक हो गया, लाटी जीभ दिखा। लाटी भुवनमोहिनी हँसी हँस दी, जीभ नहीं दिखायी। प्रभा बोली, ''अपने आदमी को भी भूल गयी क्या?'' वैष्णवी बोली, ''इसे कुछ याद नहीं, फिक-फिक कर हँसती है।'' चाय का पैसा देकर वैष्णवी 'उठ साली लाटी' हल्की-सी ठोकर मारकर लाटी को उठाया। वे सब चले गये। लाटी उठी, दल के पीछे-पीछे चली गयी।

बहादुर

अमरकान्त जी द्वारा लिखित इस कहानी में आधुनिक भारत के छोटे-से परिवार का परिवेश है। बहादुर नेपाल का 12-13 वर्ष का लड़का है जो इस कहानी का नायक है। उसके पिता की युद्ध में मृत्यु हो चुकी थी। माँ की पिटाई से परेशान होकर वह घर से भागकर एक मध्यमवर्गीय परिवार में नौकरी कर ली। बहादुर परिश्रम से घर में काम करता था, जिससे गृहस्वामिनी निर्मला बहुत खुश रहती थी। निर्मला ने उसका नाम 'बहादुर' रखा। बहादुर देर रात तक काम करता और सुबह जल्दी उठकर काम में जुट जाता। वह इसी में खुश था और हर समय हँसता रहता था। वह रात को सोते समय पहाड़ी भाषा में कोई गीत गुनगुनाता रहता था। हँसना और हँसाना, मानो उसकी आदत बन गयी थी। किशोर निर्मला का उद्दण्ड बेटा था। उसने अपने सारे काम बहादुर को सौंप दिये थे। यदि बहादुर से उसके काम में तनिक-सी भी असावधानी होती तो उसकी पिटाई वह करता। पिटकर बहादुर एक कोने में चुपचाप खड़ा हो जाता और कुछ देर बाद पूर्ववत् काम में लग जाता। एक दिन किशोर ने बहादुर को 'सुअर का बच्चा' कह दिया। बहादुर इस गाली को सहन न कर सका और उसने उसका काम करने से मना कर दिया। अब तो घर की स्थिति यह हो गयी थी कि तनिक-सी गलती होने पर भी किशोर और निर्मला उसे जमकर पीटते। मारपीट और गालियों के कारण बहादुर से गलतियाँ और भूलें अधिक होने लगीं। एक रविवार को निर्मला के रिश्तेदार अपनी पत्नी और बच्चों के साथ निर्मला के घर आये। अचानक उस रिश्तेदार की पत्नी नीचे फर्श पर, चारपाई पर और कमरे के अन्दर कुछ ढूँढ़ने लगी। पूछने पर उसने बताया कि उसके ग्यारह रुपये खो गये हैं, जो उसने चारपाई पर ही निकालकर रखे थे। इसके बाद घर के सभी लोग बहादुर पर ही सन्देह करने लगे।

बहादुर ने रुपये उठा लेने से इन्कार कर दिया। सभी ने खूब पीटा और पुलिस के सुपुर्द करने की धमकी भी दी। सब सोच रहे थे कि पिटाई के डर से वह अपना अपराध स्वीकार कर लेगा, किन्तु जब उसने रुपये लिए ही नहीं तो वह कैसे कहता कि रुपये उसने उठाये थे। उस दिन से बहादुर बहुत ही खिन्न रहने लगा और एक दिन दोपहर को अपना सभी सामान छोड़कर वह घर से चला गया। निर्मला के पति शाम को जब दफ्तर से लौटे तो उन्हें पता चला कि बहादुर अपना सामान छोड़कर घर से चला गया। निर्मला, उसके पति और किशोर को उसकी ईमानदारी पर विश्वास हो गया था। उन्होंने सोचा कि रिश्तेदारों के रुपये भी उसने नहीं चुराये थे। घर के सभी सदस्य पश्चात्ताप करने लगे, लेकिन अब तो बहादुर चला गया था। बस, उसकी यादें ही शेष रह गयी थीं। बहादुर निर्धन तो था, पर स्वाभिमान और सहनशीलता उसमें कूट-कूटकर भरी थी।

कर्मनाशा की हार

कर्मनाशा एक नदी का नाम है, जिसके किनारे 'नयीडीह' नामक एक गाँव है। उस गाँव में भैरो पाँड़े नामक एक व्यक्ति हैं, जो पैरों से अपाहिज हैं। भैरो पाँड़े के माता-पिता की मृत्यु हो चुकी है। माता-पिता की मृत्यु के बाद उन्होंने अपने दो वर्षीय छोटे भाई कुलदीप का पालन-पोषण पुत्र की तरह किया, जो अब सोलह वर्ष का नवयुवक हो चुका है। भैरो पाँड़े की पुश्तैनी मकान के

समीप ही एक मल्लाह परिवार रहता है। 'फुलमत' इसी परिवार की विधवा पुत्री है। एक दिन फुलमत भैरो पाँड़े के यहाँ बाल्टी माँगने आयी। बाल्टी देते समय कुलदीप फुलमत से टकरा गया। फुलमत पहले सकपकाती है, फिर मुस्करा देती है। कुलदीप भी उसकी ओर मुग्ध दृष्टि से देखता है। भैरो पाँड़े यह सब देख लेते हैं और कुलदीप के क्रिया-कलापों पर दृष्टि रखने लगते हैं। कुलदीप एवं फूलमत एक-दूसरे से प्रेम करने लगते हैं। वे दोनों एक दिन चाँदनी रात में कर्मनाशा के तट पर छुपकर मिलने गये। भैरो पाँड़े संयोगवश उन दोनों को देख लेते हैं। यह देखकर वे क्रोधित हो उठते हैं और दोनों को डाँटते हैं। कुलदीप के तो गाल पर थप्पड़ भी मार देते हैं। लज्जा और भय के कारण कुलदीप घर से भाग जाता है।

कुछ महीने के बाद कर्मनाशा नदी में बाढ़ आ गयी। गाँववालों में यह अन्धविश्वास प्रचलित है कि कर्मनाशा में जब बाढ़ आती है तो मानव-बलि अवश्य लेती है। फुलमत विधवा है, किन्तु वह कुलदीप के बच्चे को जन्म दे चुकी है। इस सूचना को प्राप्त करते ही सारे ग्रामीण कर्मनाशा की बाढ़ का कारण फुलमत को समझने लगते हैं और निर्णय लेते हैं कि उसे उसके बच्चे सहित कर्मनाशा में फेंक दिया जाय। फुलमत अपने बच्चे को छाती से चिपकाये भयभीत खड़ी थी। उसी समय भैरो पाँड़े आये। वे इस क्रूरता को रोकना चाहते हैं, किन्तु सामाजिक प्रतिष्ठा के नष्ट होने के भय से सत्य प्रकट करने से कतराते हैं। अन्त में भैरो पाँड़े बच्चे को गोद में लेकर निर्भीक स्वर में कहते हैं कि फुलमत उनके छोटे भाई की पत्नी है, उनकी बहू है और उसका बच्चा उनके छोटे भाई का पुत्र है। गाँव का मुखिया कहता है कि पाप का दण्ड तो भोगना ही पड़ेगा। इस पर भैरो पाँड़े कठोर स्वर में कहते हैं कि यदि वे यहाँ एकत्रित सभी के पापों को गिनाने लगें तो यहाँ खड़े सभी लोगों को कर्मनाशा की धारा में जाना पड़ेगा। भीड़ में सन्नाटा छा गया। नदी की बाढ़ भी उतर गयी।

ध्रुव-यात्रा

राजा रिपुदमन उत्तरी ध्रुव की यात्रा सफलतापूर्वक पूर्ण करके लौटते समय यूरोप के नगरों में जहाँ-जहाँ रुके वहाँ उनका भरपूर सम्मान हुआ। अखबारों में प्रकाशित इस खबर को पढ़कर उर्मिला प्रसन्न होकर अपने सोते शिशु का चुम्बन लिया। कई दिन तक अखबारों में ध्रुवयात्रा की खबर छपती रही और उर्मिला उसे पढ़ती रही। रिपुदमन मुम्बई आ पहुँचे, वहाँ भी उनका भरपूर स्वागत हुआ। शिष्टमण्डल के अनुरोध पर राजा रिपुदमन दिल्ली आये। वे सबसे सौजन्य से मिलते हैं। ऐसा लगा कि उन्हें प्रदर्शनों में उल्लास नहीं है। एक संवाददाता ने लिखा कि मैं मिला तो उनके चेहरे से ऐसा लगा कि वे यहाँ न हों, जाने कहीं दूर हों। उर्मिला ने इसे पढ़ा और अखबार अलग रख दिया। रिपुदमन ने यूरोप में आचार्य मारुति की ख्याति सुनी थी किन्तु दिल्ली में रहकर भी वे आचार्य मारुति को नहीं जानते थे। अवकाश पाते ही वे आचार्य मारुति के पास पहुँचे। अभिवादन के बाद मारुति ने पूछा कि वैद्य के पास रोगी आते हैं विजेता नहीं तो रिपुदमन ने कहा कि मुझे नींद नहीं आती, मन पर मेरा काबू नहीं रहता। आचार्य मारुति और राजा रिपुदमन में काफी देर तक बातें हुईं। रिपुदमन विवाह को बन्धन मानता है किन्तु प्रेम से इनकार नहीं करता है। एक दिन राजा रिपुदमन सिनेमा हाल के एक बाक्स में उर्मिला से मिलता है। उर्मिला उसकी प्रेमिका और उसके बेटे की माँ है। यह बात उन दोनों के अलावा तीसरा व्यक्ति नहीं जानता है। काफी बातें होती हैं। बच्चे का नाम रिपुदमन माधवेन्द्र बहादुर रखता है। उर्मिला पूछती है कि तुम अपना काम बीच में छोड़कर क्यों चले आये? वह कहती है तुम्हें मेरी और मेरे बच्चे की चिन्ता करना काम नहीं है। रिपुदमन कहता है कि मैं केवल तुम्हारा हूँ, तुम जो कहोगी वही करूँगा। क्या तुम अब भी नाराज हो। उर्मिला कहती है कि मुझे तुम पर गर्व है। तुम्हारा काम अब दक्षिणी ध्रुव पर विजय करना है, तुम्हें जाना ही होगा। यदि मेरे कारण तुम नहीं जाओगे तो मैं अपने को क्षमा नहीं कर पाऊँगी। मारुति की बात चलती है तो उर्मिला उसे ढोंगी कहती है किन्तु रिपुदमन के कहने पर वह मारुति के पास जाती है किन्तु उसके कहने पर विवाह के लिए तैयार नहीं होती है। मारुति रिपुदमन को बताता है कि उर्मिला उसकी सगी पुत्री है। उसे विवाह करके साथ रहना चाहिए। वह भी यही चाहता है किन्तु उर्मिला के हठ के कारण वह तीसरे दिन दक्षिणी ध्रुव जाने के लिए अमेरिका फोन पर बातें कीं और बताया कि परसों शटलैण्ड द्वीप के लिए पूरा जहाज हो गया है। उर्मिला के कुछ दिन रुकने के लिए कहने पर वह रुकने के लिए तैयार नहीं हुआ। इस खबर से अखबारों में धूम मच गयी। वह दिन भी आ गया जब रिपुदमन उससे दूर चला गया। उर्मिला कल्पनाओं में बहुत कुछ सोचती रहती थी। किन्तु अचानक तीसरे दिन उर्मिला ने अखबार में पढ़ा कि राजा रिपुदमन सबेरे खून में भरे पाये गये। गोली का कनपटी के आरपार निशान था। मृतक के तकिये के नीचे मिले पत्र का आशय था–यह यात्रा निजी थी। किसी के वचन को पूरा करने जा रहा था। ध्रुव पर भी बचना नहीं था। अब भी नहीं बचूँगा। भगवान् मेरे प्रिय के अर्थ और मेरी आत्मा की रक्षा करें।